अष्टांगिक मार्ग
(Eight fold Path)

अष्टांगिक-मार्ग के आठ (8) अंग हैं। दुःखों के दूर होने की संभावना बतलाने के बाद सर्वजनों के लिए सुलभ व व्यावहारिक मार्ग बताया गया है तथागत के द्वारा, जिस पर चलकर हम दुःखों से छुटकारा पा सकते हैं। अपने चतुर्थ आर्य-सत्य 'दुःख निरोध-गामिनी-प्रतिपदा' में बुद्ध इन आठ मार्गों को उत्तम एवं निर्वाण का अधिगम कराने वाला मार्ग बताया है। ये आठ मार्ग निम्नवत् हैं —

(1)- सम्यक दृष्टि (Right View)→ 'सम्यक्' अर्थात् 'समुचित' / 'सही' युक्तियुक्त तथा दृष्टि अर्थात् 'दृष्टिकोण'। अक्सर हमारे दुःखों का कारण वस्तुओं के प्रति हमारा गलत दृष्टिकोण होता है। जैसे- प्रायः हम अनित्य को नित्य, मरणधर्मा को अमर समझ बैठते हैं और फिर उनमें आसक्ति होने से अन्ततः दुःख उठाते हैं। अतः सम्यक् दृष्टि हमें इनसे बचाती है (आसक्ति एवं दुःखों से)। इस प्रकार चारों आर्य-सत्यों के ध्यान को भी सम्यक् दृष्टि कहा गया है।

(2)- संकल्प (Right Resolve)→ सम्यक्-संकल्प से तात्पर्य है- दृढ़ निश्चय करना। सम्यक् संकल्प के दो अंश हैं - शुभ संकल्प का ग्रहण तथा अशुभ संकल्पों का त्याग। इसमें हमें संकल्प लेना होता है कि हमारे हर कार्य निर्वाण-प्राप्ति के उद्देश्य से ही होंगे। इसकी प्राप्ति हेतु समस्त वासनाओं और इच्छाओं के त्याग तथा क्रोध, घृणा, द्वेष और वैर-भावना के त्याग का संकल्प भी आवश्यक है। वस्तुतः संकल्प व्यक्ति पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालते हैं जिससे उसमें अपने निर्धारित मार्ग पर चलने की शक्ति मिलती है।

(3). सम्यक् वाक् (Right Speech)→ सम्यक् वाक् से तात्पर्य 'समुचित वचन' से है। अर्थात् अनुचित वचन का त्याग एवं मिथ्या वचन का परित्याग ही सम्यक्-वचन है।

निर्वाण के इच्छुक व्यक्ति को नियंत्रित, शुद्ध, प्रिय, सत्य एवं शांति देने वाले वचन बोलना चाहिए तथा उसके विपरीत कटु, अप्रिय, अशुद्ध एवं असत्य वचन का त्याग करना चाहिए।

(4). <u>सम्यक् कर्मान्त (Action)</u> → पापकर्मों का परित्याग एवं सदाचरण युक्त जीवन-यापन ही सम्यक् कर्मान्त है। तथागत ने दस प्रकार के अकुशल कर्मों से विरत रहना तथा दस कुशल कर्मों का सम्पादन करना ही श्रेयस्कर बताया है। प्रत्येक को पाप-कर्मों यथा - हिंसा, चोरी एवं अब्रह्मचर्य से बचना चाहिए। इस प्रकार सभी को निःस्वार्थ वृत्ति, उदारता एवं करुणा से संचालित होकर कर्म करना चाहिए।

(5). <u>सम्यक् आजीविका (Earning)</u> → जीविका निर्वाह के लिए उचित मार्ग का अनुसरण तथा निषिद्ध मार्ग का त्याग ही सम्यक् आजीव है। बौद्ध दर्शन में कुछ जीविकोपार्जन के साधन निषिद्ध बताये गये हैं। जैसे - शस्त्र का व्यापार, प्राणी का व्यापार, मांस का व्यापार, मद्य का व्यापार, विष का व्यापार आदि। इसके अतिरिक्त दबाव, धोखा, रिश्वत, अत्याचार, जाल-साजी, ढकैती, लूट-पाट, कृतघ्नता आदि बुरे साधनों के द्वारा किये गये जीविकोपार्जन की निन्दा की गयी है।

(6) <u>सम्यक् व्यायाम (Effort)</u> → सम्यक् यत्न (प्रयत्न) का नाम ही सम्यक् व्यायाम है। दूसरे शब्दों में सही से शारीरिक एवं मानसिक व्यायाम से है, जिससे शरीर, मन-बुद्धि चुस्त बनाने, सजग एवं शांत या स्थिर रहता है। वस्तुतः यह मन ही होता है जो हमें अच्छे या बुरे कर्मों में प्रेरित करता है। अतः हमें प्रयत्नपूर्वक अच्छे विचारों को मन में लाने चाहिए। अभिधर्म में चार प्रकार के प्रयत्नों को बताया गया है -

(i). अनुत्पन्न अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिए यत्न।
(ii). उत्पन्न अकुशल धर्मों के प्रहाण (त्याग) के लिए यत्न।
(iii). अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पन्न के लिए यत्न तथा,
(iv). उत्पन्न कुशल धर्मों की वृद्धि के लिए यत्न करना।

इस प्रकार से प्रयत्नपूर्वक साधक का अपने मन पर नियंत्रण रखना ही सम्यक् व्यायाम है।

(7). सम्यक स्मृति (Right Memory)→ ज्ञानयुक्त, सतत जागरूकता को सम्यक स्मृति कहते हैं। अर्थात् जो कुछ भी पूर्व में देखा-सुना उसे सही-सही याद रखने के साथ ही बुद्धोपदिष्ट आर्य सत्यों का सतत स्मरण रखना है। शरीर का उदाहरण देते हुए बुद्ध कहते हैं कि- शरीर क्षणिक है एवं दुःख उत्पन्न करने वाला है। यह केवल मांस, रक्त, हड्डी, त्वचा, अंतड़ी जैसे घृणित पदार्थों से भरा पड़ा है और नष्ट होने वाला है। अतः निश्चय ही इस प्रकार की स्मृति हममें विरक्ति की भावना उत्पन्न करती है, जिससे निर्वाण-पथ पर आगे बढ़ने में सहायता मिलती है।

(8). सम्यक समाधि (Concentration)→ चित्त की एकाग्रता ही सम्यक-समाधि है। प्रारम्भ के सात सोपान तो अशुभ-चित्तवृत्तियों का निरोध करके हमें इसके योग्य बनाते हैं। समाधि हेतु व्यक्ति को निर्जन प्रांत या वन में विशुद्ध चित्त से स्थिर आसन पर बैठना चाहिए और वह निम्न 4 अवस्थाओं से गुजरता है -

(i)- प्रथम अवस्था में साधक चार आर्य-सत्यों पर तर्क-वितर्क पूर्वक चिन्तन-मनन करता है।

(ii)- दूसरी अवस्था में साधक के मन में आर्य सत्यों के प्रति श्रद्धा का उदय होता है। इसमें साधक आनंद का अनुभव करता है।

(iii). इस अवस्था में साधक के मन में आनंद के प्रति उपेक्षा का भाव जाग्रत होता है।

(iv)- इस अवस्था में साधक की चित्त-वृत्तियों का पूर्ण निरोध हो जाता है, उसका चित्त शांत हो जाता है। अर्थात् निर्वाण को प्राप्त हो जाता है।

इस प्रकार से उपर्युक्त अष्टांगिक-मार्ग निर्वाण प्राप्ति साधक हेतु अति महत्वपूर्ण है। ये 8 अंग शील, समाधि एवं प्रज्ञा रूपी त्रिशिक्षा के रूप में विशुद्धि का मार्ग प्रशस्त करता है। इसी से तृष्णा को पूर्णतः